इकाई 22 सर्जनात्मक लेखन की भाषा

इकाई की रूपरेखा

22.0 उद्देश्य
22.1 प्रस्तावना
22.2 सर्जनात्मक लेखन की विशिष्टता
  22.2.1 गद्य लेखन
  22.2.2 पद्य लेखन
22.3 सर्जनात्मक लेखन की भाषा
  22.3.1 बोलचाल की भाषा और लिखित भाषा
  22.3.2 लिखित भाषा और साहित्य की भाषा
  22.3.3 साहित्य की भाषा में विविधता
22.4 सर्जनात्मक लेखन की भाषा के विविध रूप
  22.4.1 फीचर की भाषा
  22.4.2 निबंध की भाषा
  22.4.3 कहानी की भाषा
22.5 सर्जनात्मक लेखन की भाषा का महत्व
22.6 भाषा का शिल्प से संबंध
22.7 सारांश

22.0 उद्देश्य

सर्जनात्मक लेखन से आप सभी परिचित होंगे। इस इकाई में हम उसी पर विचार करेंगे। इस इकाई को पढ़ने को बाद आप :

- सर्जनात्मक लेखन क्या है? इसका महत्व स्पष्ट कर सकेंगे,
- सर्जनात्मक लेखन के विभिन्न प्रकारों को समझ सकेंगे,
- सर्जनात्मक लेखन में विधाओं के फर्क के माध्यम से भाषा में आने वाले परिवर्तन को विवेचित कर सकेंगे, और
- आम बोलचाल की भाषा, शास्त्र की भाषा और साहित्य की भाषा के अंतर को बता सकेंगे।

22.1 प्रस्तावना

हिंदी में आधार पाठ्यक्रम-2 की 22वीं इकाई में आप सर्जनात्मक लेखन की भाषा के संबंध में अध्ययन करेंगे। इस पूरे पाठ्यक्रम को हम तब तक नहीं समझ सकते - जब तक कि हमारे सामने प्रश्न स्पष्ट और साफ नहीं हों। सर्वप्रथम इस प्रश्न को उठाने का प्रयत्न करेंगे कि सर्जनात्मक लेखन क्या है? सर्जनात्मक लेखन और अन्य लेखन किस प्रकार से भिन्न होता है। भाषा का विकास मनुष्य के भाव और विचार को व्यक्त करने के लिए हुआ। लिखित भाषा को व्यक्त करने से पूर्व मनुष्य आंगिक और वाचिक भाषा का प्रयोग करता था। लिखित भाषा के प्रयोग से मनुष्य अपनी संवेदनाओं को भाषा में सुरक्षित रखना सीख सका।

जब हम सर्जनात्मक लेखन की बात करते हैं तो उसे अन्य लेखन से अलग परिभाषित करने की जरूरत की ओर भी ध्यान देना होता है। अर्थशास्त्र या इतिहास में शब्द और अर्थ का सीधा रिश्ता होता है। इन शास्त्रों या विज्ञानों में प्रयुक्त शब्द या परिभाषित शब्द किसी निश्चित अर्थ में रूढ़ होते हैं। हर बार शब्द अपने एक ही अर्थ को दुहराते

हैं। सर्जनात्मक लेखन में शब्द अपने संदर्भ के साथ अर्थ की अनेक छायाओं को रचते हैं। वे किसी निश्चित सीमा में रूढ़ नहीं होते। रचनात्मक लेखन की भाषा में शब्दों और अर्थों की नवीनता बेहद जरूरी है।

अब रचनात्मकता को समझने के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि हम उसके माध्यम को समझें। उसके विविधा रूपों को समझें। चित्र, नृत्य, संगीत, और साहित्य मानवीय रचनात्मकता के अलग-अलग आयाम हैं। कलात्मक संवेदना को व्यक्त करने के अलग-अलग तरीके हैं। हर कला को किसी न किसी माध्यम से व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए चित्र को रंग और रेखाओं में, नृत्य को भंगिमा और मुद्राओं में, संगीत को सुर में और साहित्य को भाषा के माध्यम से अभिव्यंजित किया जाता है। भाषा कहने मात्र से साहित्य की रचनात्मकता परिभाषित नहीं हो जाती है। भाषा का प्रयोग साहित्य में अनेक तरह से अनेक रूपों में होता है। भाषा संस्कृति का महत्वपूर्ण उपकरण है। दो भिन्न तरह की पृष्ठभूमि में रहने वाले मनुष्य की भाषा में अंतर हो जाता है। इसका प्रभाव सर्जनात्मक लेखन पर भी पड़ता है। उदाहरण के लिए ग्रामीण और शहरी में ग्रामीण व्यक्ति की भाषा में आंचलिकता होती है और शहरी व्यक्ति मानक भाषा का प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार शहर में भी शिक्षित और अशिक्षित व्यक्ति की भाषा में अंतर होता है।

इस इकाई में सर्जनात्मक लेखन के संदर्भ में भाषा प्रयोग पर विचार करेंगे। सर्जनात्मक लेखन के दो मुख्य रूप हैं गद्य और पद्य। उसके मूल में भाषा का जो रूप होता है उसकी पड़ताल करेंगे। बोलचाल की भाषा और साहित्यिक भाषा के अंतर को दिखाया जाएग। पुनः साहित्य की विशेषता की चर्चा करेंगे। सर्जनात्मक लेखन की भाषा को कहानी, निबंध और फीचर में कैसे समझेंगे। साहित्य की विविध विधाओं के संदर्भ में भाषा के प्रयोग और विवेचना को रेखांकित करेंगे। अंत में सर्जनात्मक लेखन के महत्व को प्रतिपादित करेंगे। भाषा और शिल्प के संबंध को भी विश्लेषित करेंगे।

22.2 सर्जनात्मक लेखन की विशिष्टता

सभी प्रकार का लेखन साहित्य नहीं होता है। लेखन के अंतर्गत तमाम तरह के शास्त्र और विज्ञान भी आते हैं। उन्हें भी भाषा में ही लिखा जाता है। उदाहरण के लिए इतिहास, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, रसायनशास्त्र आदि साहित्य की श्रेणी में नहीं आते हैं। साहित्य के अंतर्गत भी अनेक विधाएँ आती हैं। उक्त सभी विधाओं को सर्जनात्मक लेखन मानने के बारे में मतभेद देखा जाता है। उदाहरण के लिए आलोचना साहित्य को रचनात्मक लेखन में स्थान नहीं दिया जाता है। यह अलग बात है कि अच्छी आलोचना भी रचनात्मक सीमाओं को छूने लगती है। सच्ची आलोचना में भी रचनात्मकता का गुण होता है। लेकिन उसे पूर्णतः रचनात्मक नहीं माना जा सकता। सर्जनात्मक कहने से मौलिक, नया, विशिष्ट और अर्थवान होने का बोध होता है। सर्जनात्मक लेखन एक विशेष काल में रचा जाता है परंतु वह कृति आगामी काल में भी हमारे लिए नया अर्थ प्रस्तुत करती है। महाकवि तुलसीदास ने 'रामचरित मानस' की रचना चार सौ साल पहले की थी। लेकिन 'रामचरित मानस' आज भी उतना ही सरस और अर्थवान् प्रतीत होता है। उसकी एक पंक्ति को उठाकर व्याख्या करने से बात और भी अधिक स्पष्ट हो जाएगी।

'जस-जस सुरसा बदन बढ़ावा, तासु दून कपि रूप देखावा'

इसका सीधा अर्थ भी अर्थ हो सकता है। आज के युग के संदर्भ में भी इसकी व्याख्या की जा सकती है। उत्पीड़क सत्ता का अत्याचार फैलता जाएगा जनता का प्रतिरोध भी

उतना ही बढ़ता जाएगा। तुलसीदास के शब्दों में इतना अवकाश था जिसमें हम अपने युगों की आकांक्षा को और अपने प्रश्न को उनमें ढूंढ लेते हैं। यही तो रचनात्मक लेखन की विशिष्टता है।

एक विज्ञापन या राजनीतिक घोषणापत्र में शब्दों का प्रयोग एक खास उद्देश्य की प्राप्ति के लिए होता है - वे चाहें वस्तुओं की बिक्री के लिए हो अथवा राजनीतिक सत्ता को पाने के लिए। एक रचनाकार का रिश्ता भाषा के साथ अलग तरह का होता है। विज्ञापक या राजनेता भी शब्दों का उपयोग करते हैं। अपना मतलब स्पष्ट होने के बाद उनके लिए उन शब्दों का महत्व नहीं रह जाता है। एक रचनाकार की अच्छी कृति को पढ़ने के बाद भी हमें उसका नया अर्थ मिलता रहता है। आगामी काल में भी उसका नया अर्थ हमें प्राप्त होता है। विज्ञापन के शब्द हमें बाजार में उस वस्तु को खरीदने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। लेकिन एक कहानी, एक अच्छी कविता के शब्द हमें बार-बार उस भाषा में लौटने के लिए बाध्य करते हैं। जैसे फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी "तीसरी कसम" हमें बहुत अच्छी लगती है। हमें उस कहानी में हीरामन और हीराबाई के बीच का संवेदनशील प्रेम प्रभावित करता है। उसे बार-बार महसूस करने के लिए हमें रेणु की इस रचना को बार-बार पढ़ने की आवश्यकता होगी।

सर्जनात्मक लेखन की विशिष्टता के संदर्भ में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि इसका कोई दूसरा विकल्प नहीं होता है। यदि किसी कृति का दूसरी भाषा में रूपांतरण किया जाए तो उससे वैसा अनुभव नहीं होगा, जैसा कि मूल भाषा में मिलता है। "तीसरी कसम" कहानी का यदि अंग्रेजी अनुवाद किया जाए तो क्या हमें उसी तरह का स्वाद मिलेगा जैसा रेणु की आंचलिक भाषा में मिलता है? निस्संदेह नहीं मिलेगा। रचनात्मकता का संबंध पूरी संस्कृति के साथ होता है। शेक्सपीयर के 'हेमलेट' की प्रसिद्ध पंक्ति 'टु बी ऑर नॉट टु बी' उसका हिंदी में किसी तरह का अनुवाद किया जाए। हमें वे अर्थध्वनियाँ नहीं मिलेगी जो उसकी मूल भाषा में है। हेमलेट की पीड़ा को किसी दूसरे शब्दों में संयोजित करके नहीं व्यक्त किया जा सकता है।

भाषा और संस्कृति का संबंध भी अभूतपूर्व होता है। हमारी संवेदनाओं के निर्माण में संस्कृति की बड़ी अहम भूमिका होती है। जब हम संस्कृति कहते हैं तो हमारा तात्पर्य स्थान विशेष की भौगोलिक बनावट, रीति-रिवाज, रहन-सहन, मिथक और प्रतीक तथा भाषा से होता है। अब संस्कृति किस तरह से रचनात्मकता पर अपना असर पैदा करती है इसका उदहारण देखेंगे। भारत में वर्षा उल्लास और आनंद का प्रतीक है। वर्षा होने से ही फसल होगी। फसल आदि अच्छी हुई तो कृषक आनंदित होगा। यह तो हुई भारत जैसे कृषि प्रधान देश की बात। योरोप में वर्षा दुःख का प्रतीक हो जाती है। यूरोप ठंढा क्षेत्र हैं। वर्षा होने से ठंडक अधिक पड़ती है इसलिए वर्षा से लोग आनंदित नहीं होते हैं। वे दुःखी होते हैं। यह इस बात का उदहारण है कि भौगोलिक बनावट के कारण संस्कृति में कितना अंतर पड़ गया। सर्जनात्मक लेखन में संस्कृति के प्रतीकों का प्रवेश अनायास ही हो जाता है। जैसे घटा की घुमड़न वियोग की पीड़ा और विरह के अवसाद का और बिजली की चमक प्रिय मिलन की उत्कंठा का प्रतीक हैं। ये चीज़ें संस्कृति से लेखक को मिलती है। इसके लिए लेखक किसी पुस्तकालय में बैठकर अध्ययन नहीं करता है। रचनाकार अपने अनुभव से लेखन को मौलिक और विशिष्ट बना देता है।

22.2.1 गद्य लेखन

हम देखते हैं कि जीवन में कोई डॉक्टर बनता है। कोई शिक्षक बनता है। कोई वैज्ञानिक बनता है। उसी प्रकार से साहित्य में भी अनुभव की विविधता है। अनुभव की विविधता अभिव्यक्ति के अलग-अलग रास्ते को अपनाती है। सर्जनात्मक लेखन को

मुख्यतः दो भागों में बाँटा गया है। गद्य लेखन और पद्य लेखन। रचनात्मक गद्य में कहानी, उपन्यास, निबंध और नाटक को रखते हैं। इसके अतिरिक्त भी कई रचनात्मक गद्य विधाएँ प्रचलित हैं। गद्य और पद्य के जो मुख्य अंतर हैं उसे रेखांकित करना अनिवार्य होगा। गद्य की भाषा में शब्दों का सीधा संबंधा सामाजिक सरोकार से होता है। गद्य विधाओं का संबंध समाज से अधिक होता हे। कविता में रचनाकार शब्दों में अर्थ सृजन करता है। आधुनिक पूर्व गद्य का महत्व नगण्य था। आज पद्य में गद्यात्मकता का दबाव बढ़ता जा रहा है। यथार्थ संप्रेषण के लिए गद्य का महत्व बढ़ता जा रहा है। गद्य में जीवन के जटिल यथार्थ को व्यक्त करना संभव हो सका है। कहानी में हम अपने सीमित अनुभव को कलात्मक रूप में रख सकते हैं। उपन्यास का महत्व यथार्थ को समुचित रूप में समेटने में है। उपन्यास के ढाँचे के भीतर समय का अपना निश्चित और नियोजित संघटन है। नाटक में अभिनय के द्वारा जीवन के समसामयिक यथार्थ को पकड़ा जाता है। नाटक का समकालीनता से बहुत नजदीक का संबंध है। अच्छे निबंध की रचना में वैचारिक बोध और अनुभव का धरातल ठोस होता है। गद्य लेखन का वास्ता जीवन की वास्तविकताओं से अधिक होता है। हम जितने आधुनिक होते जाते हैं यथार्थ संबंधी हमारी पहचान प्रखर होती जाती है।

22.2.2 पद्य लेखन

कविता में सर्जक का सरोकार भाषा से नहीं होकर शब्दों से होता है। शब्दों को तराशकर कवि उसमें अर्थ भरता है। विलुप्त अर्थ की तालाश करता है। शब्दों की जड़ों में कवि अर्थ की संभावनाओं को छुपा देता है। उसमें अतीत, वर्तमान और भविष्य के अर्थों को स्वीकृति मिलती है। कविता में अकेला शब्द भी अपने में इतना सघन हो सकता है कि अपने को प्रकट करने में एक अनोखा अर्थ दे सकता है। कविता में भाषा की व्यंजना बढ़ जाती है। एक साथ कई स्तरों पर संवाद संभव हो जाता है। कविता ऐसे अर्थों से हमें परिचित कराती है जिससे हम अपरिचित होते हैं। अपरिचित अर्थ से परिचित कराना जोखिम का काम हो सकता है। इसमें संप्रेषणहीनता का प्रश्न आसानी से उठ सकता है। एक बड़ा सर्जक साधारण शब्दों से भी बड़े अर्थ की चमक को पैदा कर देता है। निराला की कालजयी कृति 'राम की शक्ति पूजा' की एक पंक्ति की ओर ध्यान दें।

'रवि हुआ अस्त ज्योति के पत्र पर लिखा अमर'

यहाँ रवि शब्द मात्र सूर्य के लिए नहीं है। राम सूर्यवंशी थे। शब्द का एक संदर्भ राम की वंश परंपरा से है। रवि का अस्त होना मात्र दिन ढ़लने को ही नहीं बताता है। एक श्रेष्ठ वंश परंपरा के श्रेष्ठ पुरुष के पुरुषार्थ के अस्त होने की कहानी भी कहता है। ऐसे कितने ही संकेत सूत्र कविता में छिपे हुए मिलेंगे।

बोध प्रश्न-1

1) सर्जनात्मक लेखन की तीन विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

   i) .....

   ii) .....

   iii) .....

2) निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थान की पूर्ति सही शब्दों से कीजिए।

   i) सर्जनात्मक भाषा का उपयोग ..... में होता है।

   (साहित्य/शास्त्र)

ii) नाटक में ..... द्वारा जीवन के समसामयिक यथार्थ को पकड़ा जाता है।

(रंगमंच/अभिनय)

iii) कविता में भाषा की व्यंजना ..... जाती है।

(बढ़/ घट)

3) आलोचना को सर्जनात्मक किस अर्थ में माना जा सकता है।

.....

.....

22.3 सर्जनात्मक लेखन की भाषा

भाषा के द्वारा मनुष्य अपने को अभिव्यक्त करता है। हम उस स्थिति की कल्पना करें जब मनुष्य के पास भाषा नहीं थी। फिर भी, मनुष्य अपनी भावनाओं को व्यक्त करता था। मनुष्य का संप्रेषण ध्वनियों, मुद्राओं और शारीरिक हरकतों की भाषा में होता था। शब्द के आने पर साहित्य एवं उसके विविध रूपों का विकास होता चला गया। अब यहाँ निर्धारित करना होगा कि सर्जनात्मक लेखन की भाषा किस प्रकार सामान्य भाषा से भिन्न और विशिष्ट है।

भाषा संस्कृति का सर्वाधिक समृद्ध उपकरण है। रचनात्मक भाषा और सामान्य भाषा के बीच जो महत्वपूर्ण अंतर हमें मिलता है। वह भाषा की औपचारिकता का है। सर्जनात्मक लेखन की भाषा का स्वरूप मात्र औपचारिक नहीं होता है। जिस प्रकार की भाषा का व्यवहार प्रशासक, लोक संपर्क के कर्मचारियों या व्यवसायियों के द्वारा किया जाता है, उसी प्रकार की भाषा का प्रयोग सर्जनात्मक लेखन में नहीं होता। एक रचनाकार जब भाषा को अपना माध्यम बनाता है, तो उसका पहला विद्रोह भाषा के साथ ही होता है। रचनाकार रूढ़ अर्थों वाली भाषा के साथ लेखन में प्रवृत्त नहीं होता है।

एक सच्चे रचनाकार के अनुभव नये होते हैं। उसकी संवेदना नई होती है। उसके लिए रचनात्मक भाषा की आवश्यकता होती है। अपनी नई संवेदना के अनुकूल रचनाकार नये शब्दों की रचना करता है। नये संदर्भों के साथ उसे अर्थवान बनाता है। रचनाकार बोलचाल और लोक भाषा के शब्दों को तराश कर प्रस्तुत करता है। जब कभी मानक भाषा में स्थिरता आ जाती है रचनाकार अपनी संवेदना को व्यक्त करने में समर्थ नहीं हो पाता है। वह बोलचाल और लोक भाषा के शब्दों का प्रयोग कर लेखन को धारदार बनाता है। अज्ञेय की काव्य भाषा में शब्दों का रचनात्मक प्रयोग देख सकते हैं।

गगन में मेघ घिरते हैं
तुम्हारी याद घिरती है।
उमड़कर विवश बूँदे बरसती हैं
तुम्हारी सुधि बरसती है।
न जाने अंतरात्मा में मुझे यह कौन कहता है

लोक जीवन के शब्दों से सार्थक और रचनात्मक अर्थ को रचा गया है।

सर्जक की भाषा का दूसरा विद्रोह अपनी परंपरा से होता है। नये युग आते हैं। नई परिस्थितियों और नये यथार्थ सामने होते हैं। इस बदलती हुई अनुभूति का सामना

पुरानी पड़ गई भाषा से नहीं हे सकता है। उदाहरण के लिए आज के जीवन को छायावाद की शब्दावली में व्यक्त नहीं किया जा सकता। छायावाद ने जो भाषा गढ़ी थी। वह व्यक्ति के अभ्यांतर यथार्थ को प्रकाशित करने के लिए गढ़ी गई थी। प्रसाद की कुछ पंक्तियों को देख सकते हैं।

ले चल वहाँ भुलावा देकर मेरे नाविक! धीरे-धीरे
जिस निर्जन में सागर लहरी, अंबर के कानों में गहरी
निश्छल प्रेमकथा कहती हो, तज कोलाहल की अवनी रे

यह भाषा उस व्यक्ति की है जो नूतन सृजन के लिए कोलाहाल से दूर जाना चाहता है। कवि तत्सम शब्दों में जीवन के अनुराग को व्यक्त करता है। सामाजिक अनुभूतियों के बाह्य यथार्थ के प्रस्तुतीकरण और संपेषण के लिए छायावाद के शब्द पर्याप्त नहीं थे।

सर्जनात्मक लेखन की सीमाओं में केवल कविता ही नहीं आती है। सर्जनात्मक गद्य लेखन में कहानी, उपन्यास, निबंध अनेक विधाएँ आती हैं। किसी भी साहित्य में ऐसी स्थिति नहीं होती है कि कविता का भाव-बोध अलग हो और कहानी, उपन्यास आदि गद्य कृतियों में कोई अन्य भाव बोध हो। सर्जनात्मक भाषा का बुनियादी महत्व होता है जिसके माध्यम से गद्य और पद्य रचना संभव होती है। जिस साहित्य में गद्य समर्थ होता है, वहाँ कविता गद्य से भाषा शक्ति ग्रहण करती है। जहाँ कविता की भाषा में निखार पहले से है वहाँ गद्य कविता के प्रयोगों से अपनी भाषा को तराशता है। कहानी को ही केंद्र में रखे तो भाषा में परिवर्तन को रेखांकित कर सकते हैं। हिंदी कहानी में प्रेमचंद की भाषा, अज्ञेय की भाषा और निर्मल वर्मा की भाषा में अंतर है। इसकी विस्तार से चर्चा कहानी की भाषा में करेंगे। यहाँ मात्र इतना कहना आवश्यक है कि प्रेमचंद की भाषा में विवरण है। अज्ञेय की कहानी में मनोवैज्ञानिक सत्य को पकड़ने की कोशिश है। इसलिए उनमें अमूर्त भाव को मूर्त करने का प्रयास है। निर्मल वर्मा की कहानियों में संगीत की सूक्ष्म लय है। उनकी कहानी की श्रृंखला इतनी लयबद्ध चलती है कि संपूर्ण विन्यास संगीत का प्रभाव उत्पन्न करता है।

22.3.1 बोलचाल की भाषा और लिखित भाषा

जब हम बोलचाल की भाषा कहते हैं तो बोलचाल से मतलब होता है दैनिक प्रयोग की भाषा। जिस भाषा में हम अपना दैनिक कार्य-कलाप करते हैं। जैसे किसी से बात करते हैं, सब्जी खरीदते हैं इसी तरह और अनेक प्रयोग। बोलचाल की भाषा आम आदमी के प्रयोग की भाषा होती है। बोलचाल की भाषा का सीधा रिश्ता जीवन से होता है। इसलिए ये जीवन के नजदीक और जीवन में समायी हुई होती है। बोलचाल की भाषा में किसी एक व्यक्ति की रचनात्मकता नहीं होती है। वह हमारी सामूहिक रचनात्मकता का प्रतिफल है। बोलचाल की भाषा में अपार रचनात्मक संवेदना होती है। भाषा जब-जब शास्त्रीयता के बोझ से दब जाती है, अपनी रचनात्मकता को व्यक्त करने में असमर्थ हो जाती है। तब भाषा को फिर से लोक भाषा या बोलचाल की भाषा के पास जाना होता है। अंग्रेजी साहित्य का स्वच्छंदतावाद इसका गवाह है। वर्डस्वर्थ ने बोलचाल की भाषा में साहित्य लिखने की बात कही थी। रीतिकाल की जड़ भाषा से भारतेंदु युग के साहित्यकारों ने विद्रोह किया था।

बोलचाल की भाषा का संबंध भाषा के मौखिक रूप से होता है। वहाँ भाषा में ध्वनि का स्थान प्रमुख होता है। ध्वनियों के अंतर से अर्थ के अनेक रूपों को देखा जा सकता है। लिखित भाषा में अर्थ ध्वनि आधारित नहीं हो सकती है। यदि ध्वनि के

परिवर्तन को देखना है, तो नाटक में देख सकते हैं। नाटक मे अभिनय के द्वारा शब्द के बलाघात से और अधूरे वाक्य से किस प्रकार अर्थ ध्वनियाँ पैदा की जाती है, इसे वर्णन द्वारा नहीं समझाया जा सकता। इसका स्वाद नाटक के अभिनय में मिलता है। भाषा में ध्वनि के असंख्य रूप और कलाएँ हैं।

बोलचाल की भाषा का एक सामाजिक और सांस्कृतिक रिश्ता भी होता है। उदाहरण के लिए हम कहानी में ग्रामीण पात्र के भोलेपन को दिखाना चाहते हैं। उसकी मासूमियत का वर्णन साधारण भाषा में नहीं हो सकता है। ग्रामीण पात्रों को चित्रित करने के लिए आंचलिक और लोक भाषा के शब्दों का सहारा लेना पड़ेगा। तभी उसमें विश्वसनीयता आएगी। ग्रामीण की निश्छलता दिखाने के लिए उसके जीवन में रची बसी संस्कृति के अनुरूप भाषा का प्रयोग करना होगा। उदाहरण के लिए रेणु की कहानी 'आत्मसाक्षी' का उदाहरण ले सकते हैं :

> आप गद्दार हैं, चंद्रिका ने ऊंगली उठाकर पिस्तौल का निशाना लेने के लहजे में कहा-
> गनपत को लगता है कि चाँद-सूरज में भी दरार पड़ गयी है। दुनिया की हर चीज़ आज दो भागों में बँटी हुई लगती है। हर आदमी के दो टुकड़ें, दो मुखड़ें और दरका हुआ दिल!

परिस्थिति की भिन्नता से भाषा अपना अलग रूप अख्तियार करती है। परिवार में हम भाषा के जिस रूप का प्रयोग करते हैं, उसी तरह की बोलचाल की भाषा दफ्तर में प्रयोग नहीं करते। इसी तरह बोलचाल की भाषा और लिखित भाषा के प्रयोग में अंतर होता है। लिखते समय भाषा कुछ गंभीर हो जाती है। लिखते समय विषय के अनुसार भाषा का परिवर्तन हो जाता है। हम किसी को पत्र लिखते हैं, उस व्यक्ति के साथ हमारा कैसा रिश्ता है, उसी के अनुसार भाषा लिखी जाती है। यदि हम समाचार पत्र में लिख रहे हैं तो हम साधारण भाषा में सबको समझ में आने वाली बात लिखेंगे। लेकिन जब हम कविता लिखेंगे तो हमारी भाषा गंभीर और अर्थ से पूर्ण हो जाती है।

लिखित भाषा में भी मुद्रण यंत्र के अविष्कार के बाद भाषा और साहित्य का रिश्ता बदल गया है। उदाहरण के लिए हमारे यहाँ कविता प्रत्यक्ष श्रोता को सुनाई जाती थी। श्रोता और कवि के बीच जीवंत संबंध होता था। छपाई का आविष्कार होने पर प्रत्यक्ष संवाद के स्थान पर परोक्ष प्रभाव महत्वपूर्ण हो गया। श्रोता सामाजिक से सहृदयता अपेक्षित थी। जो सहृदय नहीं था वह सामाजिक नहीं था। वाचिक परंपरा में सामाजिक की प्रतिक्रिया जल्द ही कवि के पास पहुँचती थी। इसका बड़ा प्रभाव भाषा के रूप निर्धारण पर भी पड़ता था। वाचन में प्रत्येक वाचन अपने आप में सर्जन होता था। लिखित रूप आने पर रचना पाठक के लिए हो गई।

22.3.2 लिखित भाषा और साहित्य की भाषा

लिखित भाषा का प्रयोग साहित्य तक सीमित नहीं है। हम जो कुछ लिखते हैं उसमें किसी न किसी भाषा का प्रयोग करते हैं। लिखित भाषा का प्रयोग शास्त्र, विज्ञान, कला और जनसंचार के माध्यमों में भी होता है। लिखिता भाषा का प्रयोग दफ्तर में भी होता है। दफ्तर, विज्ञान और शास्त्र की भाषा से साहित्य की भाषा अलग होती है। साहित्येतर शास्त्र और विज्ञान की भाषा वैचारिक ज्यादा होती है। वह विश्लेषणात्मक और सूचनात्मक होती है। इतिहास, दर्शन और विज्ञान की शब्दावली में मानवीय संवेदना का स्पर्श लगभग नहीं होता। मानवीय संवेदना साहित्य में ही मिलती है। साहित्य की भाषा का क्षेत्र विशाल हो जाता है। उसमें ज्ञान और मानवीय संवेदना दोनों का योग होता है। उदाहरण से इसे समझना होगा। हम इसे दृश्य भाषा में समझें

तो और भी बेहतर होगा। शेक्सपीयर का प्रसिद्ध नाटक है किंग लियर। इस नाटक के अंतिम दृश्य में लियर अपनी छोटी पुत्री कॉडिलिया की लाश लेकर मंच पर आता है। उस दृश्य में उसके संवाद सुनकर आँखों में आँसू आ जाते हैं। पिता का दुर्भाग्य देखकर हम करूणा से विगलित हो जाते हैं। इस तरह शब्दों में भाव जाग जाते हैं। किसी शास्त्र, विज्ञान या अन्य भाषा में हृदय को छू लेने की ऐसी क्षमता नहीं होती। इसीलिए साहित्य की भाषा अन्य भाषा से विशिष्ट है। अनुभव और संवेदना का जितना व्यापक प्रयोग साहित्य में होता है उतना किसी भी शास्त्र में नहीं होता है।

22.3.3 साहित्य की भाषा में विविधता

संस्कृति का मूल आधार भाषा है। भाषा का उत्कर्ष साहित्य में प्रकट होता है। संस्कृति कोई ठहरी या स्थिर इकाई नहीं है। संस्कृति हमारे जीवन के जीने की प्रक्रिया की संपूर्ण अभिव्यक्ति है। भाषा में भी संपूर्णता होती है। खासकर साहित्य की भाषा में। मनुष्य जिस परिवेश में जीता है, जिस परिस्थिति से प्रभावित होता है, जिस दबाव और तनाव के बीच उसकी भाषा पनपती और विकसित होती है, ऐसी भाषा का जीवन से जुड़ाव होता है। साहित्य में भाषा की समृद्धि तभी होती है जब भाषा से लगाव हो। भाषा के प्रति आत्मीयता हो। अपने अनुभव के प्रति लगाव हो। ऐसी भाषा में ही संस्कृति को व्यक्त करने की सामर्थ्य होती है।

संस्कृति जीवन के विविध विभागों से रस ग्रहण करती है। संस्कृति लोक और शिष्ट दोनों में अपनी जड़ जमाये रहती है। साहित्य का आधार भी व्यापक होता जाता है। साहित्य में अनुभव की विविधता होती है। विविध प्रकार के अनुभव व्यक्त करने में भाषा भी सामर्थ्यवान होती जाती है। साहित्य के अनुभव कलात्मक भी हो सकते हैं। वैचारिक और अलोचनात्मक भी हो सकते हैं। ज्ञान और संवेदना दोनों को एक साथ व्यक्त करने की सामर्थ्य साहित्य में होती है।

बाजारवाद के कारण साहित्य की भाषा पर भी संकट आया है। विज्ञापन और दृश्य भाषा की मास अपील के कारण भाषा में सस्तापन लाया जा रहा है। हमारे जीवन को सस्ता और हल्का बनाया जा रहा है। केवल शब्द ही सस्ते नहीं हो रहे हैं, हमारा मानसिक जगत भी सस्ता हो रहा है। इस प्रकार की भाषा निःसंदेह हमारे अनुभव से नहीं निकली है। वस्तु को बेचने के लिए भाषा और शब्दों की ताकत को कम किया जा रहा है।

बोध प्रश्न-2

1) बोलचाल की भाषा और लिखित भाषा में प्रमुख अंतर क्या है?

.....

.....

2) रुढ़ अर्थों वाली भाषा क्या सर्जनात्मक लेखन के लिए उपयुक्त है?

.....

.....

3) कविता की वाचिक परंपरा के समाप्त होने का प्रमुख कारण क्या है?

.....

.....

22.4 सर्जनात्मक लेखन की भाषा के विविध रूप

सर्जनात्मक लेखन साहित्य रचना का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू है। जीवन की अनुभूतियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। विविध अनुभूतियों को प्रकट करने क लिए भाषा अपना विविध रूप रचती है। सर्जनात्मक लेखन में हम अपने समय की छाप को गहराई से देख सकते हैं। समय बदलने के साथ विधाओं में परिवर्तन होता जाता है। हम आज महाकाव्य नहीं रच रहे हैं। इसके मूल में वही बदली हुई अनुभूति है। हम आस्था और संशय के उन अनुभूतियों को विराटता में अनुभव नहीं कर पाते हैं, जिसमें महाकाव्य का जन्म होता है। सर्जनात्मक अनुभूति यांत्रिक प्रक्रिया नहीं है, जिसमें दुहराव मात्र नहीं होता है। सर्जनात्मक लेखन जैविक प्रक्रिया है। वह अपने लिए भाषा का विशिष्ट रूप चुन लेती है। इसीलिए साहित्य में विविध विधाओं का विकास होता जाता है।

विधाओ के विकास के साथ ही भाषा की विविधता का प्रश्न जुड़ा हुआ है। कविता की भाषा, कहानी की भाषा, उपन्यास की भाषा, निबंधा की भाषा, नाटक की भाषा, और रिपोतार्ज की भाषा एक जैसी नहीं होगी। कविता की भाषा में शब्द अपने व्यापक अर्थ को घेरता है। उपन्यास की भाषा में चित्रात्मकता होती है, वहाँ वर्णन की भाषा होती है। कहानी की भाषा में सूक्ष्मता और सांकेतिकता होती है। निबंध की भाषा में वैचारिकता होती है। नाटक की भाषा में अभिनय की प्रमुखता होती है। रिपोतार्ज में घटनाक्रम की क्रमिकता और वर्णन की चित्रात्मकता मिली होती है। यात्रा वृतांत में लेखक की भावना तथ्यों के साथ घुल-मिलकर प्रस्तुत होती है। अनुभव की विविधता ने विभिन्न प्रकार की साहित्यिक विधाओं को रचा। इन विधाओं में साहित्य भाषा अपनी विभिन्न अर्थ छाया में प्रकट होती रही।

सर्जनात्मक साहित्य में भाषा का रंग जीवन के रंग के साथ बदलता है। अब जैसे हम बचपन की अनुभूतियों का वर्णन कर रहे हैं। उसमें भाषा में स्मृति की प्रधानता होगी। वयःकाल की भावुकता को दिखाने में भाषा रोमांटिक हो जाएगी। किसी वृद्ध के करूण अनुभव में भाषा करूण हो जाएगी। विभिन्न भाव के अनुसार भाषा बदलती है। उदाहरण के लिए अज्ञेय के उपन्यास 'शेखर : एक जीवन' में आवेग की भाषा को देख सकते हैं 'अंधकार में उसे कुछ नहीं दीखता था, किंतु शशि की वेदना स्पष्ट दीखती थी ..... वह तो सदा दीख सकती थी, पर अंधकार में उसे कुछ अधिक भी दीख रहा था, जो पहले नहीं दीखा था ... सप्तपर्णी की छाँह परिजात की छाँह है, उसमें निरी सांत्वना नहीं है, उसमें उत्साह है, उसमें गंध है, रस है, प्रस्फुटन है, निरा अतीत नहीं, उसमें स्पंदित वर्तमान और उन्नींदा भविष्य भी है - और इसीलिए उसमें इतना बड़ा शून्य है जो अभी तक नहीं भरा.....'

भाषा में यथार्थ निरीक्षण से व्यंग्य की ताकत पैदा होती है। कबीर में यथार्थ की पकड़ गहरी है। उनकी भाषा में व्यंग्य के तेवर प्रखर है। रघुवीर सहाय में व्यंग्य की अनुभूति बहुत कड़ी है। सर्जनात्मक लेखन की भाषा के अतिरिक्त किसी भाषा में मानवीय भाव और आवेग को पूरी अर्थवत्ता में नहीं पकड़ा जा सकता है।

सर्जनात्मक लेखन का अपने परिवेश के साथ विशिष्ट संबंध होता है। किसी भी विधा में परिवेश की बहुत भूमिका होती है। कहानी, उपन्यास, नाटक के पात्र किस परिवेश के हैं, उसी के अनुकूल ही भाषा की भूमिका होगी। ग्रामीण पात्र यदि संस्कृतनिष्ठ हिंदी का प्रयोग करते हैं तो यह अस्वाभाविक लगेगा। यदि कोई शहरी पात्र है, वह आंचलिक भाषा का प्रयोग करता है, तो उसमें भी स्वाभाविकता नहीं दिखाई पड़ेगी। रचनाकार जब लेखन में प्रवृत्त होता है, अपने पात्र और परिवेश के अनुकूल भाषा में संवेदना रचता है।

22.4.1 फीचर की भाषा

भाषा की रचनात्मकता को अब हम विधाओं में उसका किस प्रकार से उपयोग होता है, के माध्यम से समझेंगे। फीचर को बात करते हैं, तो फीचर के विषय में भी जानकारी प्राप्त करना चाहिए। फीचर लेखन का संबंध समाचार पत्रों से है। समाचार पत्रों में जिस प्रकार से निबंध, लेख आदि छपते हैं, उसी प्रकार से समाचार पत्रों में फीचर का भी स्थान है। फीचर किसी विशिष्ट घटनाओं पर लिखा जा सकता है। किसी लुप्त होती परंपरा को याद दिलाने के लिए लिखा जा सकता है। किसी नई समस्याओं पर लिखा जा सकता है। उसकी विषय वस्तु विविध हो सकती है। हम फीचर लेखन की भाषा की बात करते हैं, तब यह ध्यान में रखना आवश्यक हो जाता है कि फीचर को समाचार पत्रों में छपना है। समाचार पत्रों की पहुँच तरह-तरह के लोगों तक होती है। जो कम पढ़े लिखे लोग हैं वे भी समाचार पढ़ते हैं। फीचर लेखन में भाषा की दुरूहता और जटिलता नहीं होनी चाहिए। भाषा की जटिलता से सभी लोग फीचर को पढ़ने में दिलचस्पी नहीं ले सकेंगे। भाषा में ऐसा प्रयोग हो, 'जो जन सामान्य की समझ में आने वाला हो। फीचर लेखन की भाषा समाचार की भाषा भी नहीं होनी चाहिए। समाचार की भाषा में एक प्रकार की तात्कालिकता होती है। इससे फीचर लेखन की रचनात्मकता की क्षति हो सकती है। फीचर की भाषा में संतुलित दृष्टिकोण अपनाना होता है। किसी ने पत्रों की लुप्त होती परंपरा पर लिखा। अब उसकी भाषा देखें कितनी सुलझी हुई है।

> 'पत्रों की परंपरा अत्यंत स्वस्थ और सुंदर है जो जीवंत रखती है संबंधों और संवेदनाओं को। इतिहास गवाह है कि स्वतंत्रता संग्राम में एक सशक्त संचार माध्यम के रूप में पत्र की कितनी अहम भूमिका रही है। स्वतंत्रता सेनानियों के पत्रों से आज भी तत्कालीन भारत की सामाजिक-राजनैतिक स्थिति का पूरा ब्यौरा मिलता है। प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरु के अपनी बेटी को जेल से लिखे गए पत्र एक दस्तावेज बन गए हैं और आज भी उनका महत्व अक्षुण्ण है।'

इस फीचर लेखन के वाक्य गठन और शब्द चयन में सहज सौंदर्य है। भाषा समझ में आने वाली है। समाचार पत्रों में लिख रहे हों, तब यह खासकर ध्यान देना चाहिए कि संयुक्त वाक्यों के अधिक प्रयोग से कहीं-कहीं भाषा उलझ जाती है।

22.4.2 निबंध की भाषा

निबंध सर्जनात्मक लेखन की महत्वपूर्ण विधा है। निबंध के विषय भी विविध होते हैं। निबंध रचनात्मक भी हो सकते हैं और आलोचनात्मक भी। यहाँ रचनात्मक निबंध पर विशेष रूप से विचार करेंगे। निबंध में भाव का जितना महत्व होता है, उतना ही महत्व विचार का भी होता है। निबंध के विषय में आचार्य शुक्ल ने लिखा है 'यात्रा के लिए निकलती रही है बुद्धि पर हृदय को भी साथ लेकर। अपना रास्ता निकालती हुई बुद्धि जहाँ कहीं मार्मिक या भावाकर्षक स्थलों पर पहुँचती है, वहाँ हृदय थोड़ा बहुत रमता अपनी प्रवृत्ति के अनुसार कुछ कहता गया है।' निबंधकार किसी भी विचार को चिंतन और तर्क की भाषा में ही नहीं अनुभव की भाषा में भी रखता है। निबंधकार अपने अनुभव और विचार को मिलाकर क्रमिक गति से निबंध में एकसूत्रता देता है। निबंध में भाव खुले हुए होते हैं। उनमें अंतःसंगति होना आवश्यक है। भाव को भाषा में एक सूत्र में नहीं पिरोया गया, तो अराजकता की स्थिति पैदा हो जाएगी। निबंध की भाषा में शब्दों का अंतःसूत्र स्वेटर की तरह बुना हुआ होता है। थोड़े से शब्दों के हेर-फेर से गद्य शिथिल और निर्जीव हो सकता है। आचार्य शुक्ल के निबंध की भाषा देखें, उसमें विचार शब्दों के बीच किस प्रकार से बहते हैं।

"विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति के प्रति होने पर लोभ वह सात्विक रूप प्राप्त करता है, जिसे प्रीति या प्रेम कहते हैं। जहाँ लोभ सामान्य या जाति के प्रति होता है वहाँ वह लोभ ही रहता है, पर जहाँ किसी जाति के एक ही विशेष व्यक्ति के प्रति होता है वहाँ वह रुचि या प्रीति का पद प्राप्त करता है। लोभ सामान्योन्मुख होता है और प्रेम विशेषोन्मुख।" (लोभ और प्रीति)

ललित निबंध की भाषा निबंधकार के व्यक्तित्व से संबद्ध होती है। निबंध की भाषा में लय होती है। उस गद्य की लय में शब्द भी चंचल दिखाई देते हैं। ललित निबंध के भाव में संगीत जैसी सुक्ष्मता होती है। गीति काव्य की तरह व्यक्तित्व का सहज प्रकाशन होता है। निबंधकार को उसकी शैली से ही पहचाना जा सकता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध "कुटज" का एक उदाहरण लें। द्विवेदी जी की भाव, भाषा और उनका व्यक्तित्व एक साथ दिखाई पड़ जाएगा

> "शिवालिक की सूखी नीरस पहाड़ियों पर मुस्कराते हुए ये वृक्ष द्वंद्वातीत हैं, अलमस्त हैं। मैं किसी का नाम नहीं जानता, कुल नहीं जानता, शील नहीं जानता पर लगता है ये जैसे मुझे अनादि काल से जानते हैं। इन्हीं में एक छोटा सा बहुत ठिगना पेड़ है, पत्ते चौड़े भी हैं, बड़े भी हैं। फूलों से तो ऐसा लदा है कि कुछ पूछिए नहीं। अजीब सी अदा है, मुस्कुराता जान पड़ता है। लगता है पूछ रहा है कि क्या तुम मुझे भी नहीं पहचानते। पहचानता तो हूँ, अवश्य पहचानता हूँ। लगता है बहुत बार देख चुका हूँ। पहचानता हूँ उजाड़ के साथी तुम्हें अच्छी तरह पहचानता हूँ"

निबंध में भाषा के साथ अर्थ की ओर भी ध्यान देना होता है। प्रसंग में भाषा के साथ अर्थों की चेतना भी होनी चाहिए। भाषा के साथ-साथ अर्थों का भी विकास हो। अर्थ के अभाव में भाषा कितनी ही अच्छी हो उसमें रचनात्मक संवेदना और नवीनता नहीं मिलेगी। निबंधकार की रुचि यदि विविध शास्त्रों में है, उसका समुचित उपयोग कर निबंध की संवेदना को सघन बनाया जा सकता है। निर्मल वर्मा के निबंध संस्कृति, समाजशास्त्र, नृविज्ञान और विचारधारा के योग से अनूठा प्रभाव उत्पन्न करते हैं। भाषा ऐसी है कि लगता है कि निबंध में उन्होंने कविता रच दी हो। निबंध लेखन में ऐसी प्रवाहमयी भाषा कम ही देखने को मिलती है।

> "हम जानते हैं कि पन्द्रहवीं शताब्दी का योरोपीय पुनर्जागण महज यूनानी अंतश्चेतना (प्रकृति से लयबद्ध होने की अंतश्चेतना) का पुनर्जन्म भर नहीं था। उसमें एक तरह का संशय और अवसाद भी था जो यूनानी संस्कृति के आत्मविश्वास से बहुत दूर की चीज थी। माइकेल ऐंजेलों की सबसे अधिक सशक्त और उज्ज्वल मूर्तियों में भी गहरे अवसाद का भाव है जैसे पत्थर को उसकी आत्मा छोड़कर चली गयी हो और वह उसके वियोग में रो रहा हो - कुछ वैसे ही अनिश्चय और आत्मशंका की छाया हमें उन्नीसवीं शती के भारतीय पुनर्जागरण पर मंडराती दिखाई पड़ती है।" (भारत योरोप : प्रतिश्रुति के क्षेत्र)

22.4.3 कहानी की भाषा

कहानी साहित्य की विशिष्ट विधा है। कहानी कहना एक प्राचीन कला विधि है। अपने घरों में हम दादी और नानी से कहानी सुनते आ रहे हैं। आधुनिक साहित्य में कहानी का जो विकास हुआ है, वह कहानी उस पुरानी से भिन्न है। अपने घरों में सुनी हुई कहानी में कहीं न कहीं हमारी वाचिक परंपरा के संस्कार मौजूद हैं। दोनों प्रकार की कहानी दो भिन्न परिस्थितियों की उपज थी। अतः दोनों प्राकर की कहानियों की भाषा भी भिन्न है। वाचिक स्थिति में पाठ पहले से निर्धारित नहीं होते थे। श्रोता और सामाजिक के संबंधों में भाषा निर्धारित होती थी। वाचन वाक्य रचना, पद विन्यास, क्रिया, सर्वनाम, वचन का निर्णय करती है।

आधुनिक कहानी को वाचक नहीं लेखक लिखता है। आज की कहानी लेखक समकालीन समाज की पहचान के आधार पर एक कल्पित व्यक्ति, जिसके साथ वह एक काल्पनिक संवाद अथवा संप्रेषण की स्थिति बनाता है। हिंदी की पहली कहानी 'रानी केतकी की कहानी' कथा संप्रेषण की वाचिक परंपरा से हटकर चाक्षुष में परिवर्तित हो रही थी। जब श्रव्य का स्थान पाठ्य ले रहा था। 'रानी केतकी की कहानी' का एक उदाहरण देखें-

> 'इस कहानी का कहने वाला यहाँ आपको जताता है और जैसा कुछ लोग पुकारते हैं, कह सुनाता हूँ। दहना हाथ मुँह पर फेरकर आपको जताता हूँ जो मेरे दाता ने चाहा तो यह ताव-भाव, राव-चाव और कूद-फाँद लपट-झपट दिखाऊँ जो देखते ही आपके ध्यान छोड़ा, जो बिजली से भी बहुत चंचल अचपलाहट में है, हिरन के रूप में अपनी चौकड़ी भूल जाए।

आधुनिक युग में जटिल यथार्थ को व्यक्त करने के लिए बहुस्तरीय भाषा की आवश्यकता हुई। कहानी में भाषा का सवाल कुछ शब्दों को छोड़ने और लेने तक ही सीमित नहीं है। प्रश्न नयी वास्तविकता के अनुरूप उतनी ही यथातथ्य, कठोर, चुस्त, संवेदनशील और सजीव भाषा के निर्माण का है। प्रेमचंद के पूर्व की कहानी घटना प्रधान थी। प्रेमचंद ने घटना के आगे कथानक और चरित्र की प्रतिष्ठा की। प्रेमचंद की कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' का उदाहरण सामने रखें। प्रेमचंद की भाषा वातावरण, चरित्र और कथ्य को एक साथ रख देती है। उस कहानी में परिवेश और चरित्र महत्वपूर्ण है। विषय यथार्थवादी होने के कारण भाषा व्यंग्यमयी हो उठी है। नपे-तुले शब्दों से सामती संस्कृति पर कहानीकार चोट करता है।

> 'वाजिद अलीशाह का समय था। लखनऊ विलासिता के रंग में डूबा हुआ था। छोटे-बड़े, गरीब-अमीर सभी विलासप्रियता में डूबे हुए थे। कोई नृत्य और गान की मजलिस सजाता, तो कोई अफीम की पीनक में मजे लेता। जीवन के प्रत्येक विभाग में आमोद-प्रमोद का प्राधान्य था। शासन विभाग में, साहित्य क्षेत्र में, सामाजिक अवस्था में, कला कौशल में, उद्योग धंधे में, आहार व्यवहार में सर्वत्र विलासिता व्याप्त हो रही थी।'

प्रेमचंद की पीढ़ी के रचनाकार वातावरण का चित्रण कभी कहानी को सजाने के लिए करते थे, तो कभी यथार्थ को रंग देने के लिए। नयी कहानी में यथार्थ बदला। भाषा भी बदल गई। नयी कहानी में वातावरण अलंकरण मात्र नहीं है। वह अंतःकरण की वास्तविकता है। शेखर जोशी की कहानी 'कोसी का घटवार' में कोसी नदी की सूखी धारा में घटवार के अकेलेपन को प्रतिबिंबित करती है। रेणु की कहानी 'रसप्रिया' में पचकौडी मिरदंगिया की मनःस्थिति बताने के लिए चील तीन बार टिहंकारी भरता है। यह पात्र की मनःस्थिति को रेखांकित करता हे। अनेक स्तरीय चेतना को अभिव्यंजित करने के लिए अनेक स्तरीय भाषा की जरूरत हुई। अनेक स्तरीय चेतना ने भाषा को सूक्ष्म संकेतमयी और प्रतीकात्मक बनाया। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक अर्थ देने की कोशिश की गई। निर्मल वर्मा की कहानी 'परिंदे' का एक उद्धरण देख सकते हैं।

'हर साल की सर्दी की छुट्टियों से पहले ये परिंदे मैदानों की ओर उड़ते हैं, कुछ दिनों के लिए बीच के इस पहाड़ी स्टेशन पर बसेरा करते हैं, प्रतीक्षा करते हैं बर्फ के दिनों की जब वे नीचे अजनबी, अनजान देश में उड़ जायेंगे - क्या वे सब भी प्रतीक्षा कर रहे हैं? वह, डॉ0 मुखर्जी, मि0 हियूबर्ट - लेकिन कहाँ के लिए? हम कहाँ जाएँगे।'

निर्मल वर्मा की कहानी में संगीत की लय की सूक्ष्मता है। वातावरण में पात्रों की मनःस्थिति और आवेग का चित्र मिल जाता है। भाषा बहुत ही महीन बुनावट की कहानियों में मिलती है।

22.5 सर्जनात्मक लेखन की भाषा का महत्व

भाषा के बिना सर्जनात्मक लेखन की कल्पना नहीं की जा सकती है। सर्जनात्मक भाषा का महत्व संवेदना के बदलते स्वरूप को पहचानने में है। मानवीय संवेदना के विभिन्न रंगों की अनुभूति सर्वप्रथम भाषा में होती है। सर्जनात्मक भाषा में ही भाषा की शक्ति का चरम विकास व्यक्त होता है। भाषा के विकास के लिए सर्जनात्मक लेखन का बहुत बड़ा महत्व है। विकसित भाषा में ही मानवीय जटिलताओं को वाणी देने की शक्ति होती है। सर्जनात्मक लेखन के अभाव में भाषा स्थिर हो जाएगी। भाषा का स्थिर होना, भाषा की मौत को ही नहीं एक संस्कृति की मौत को भी सूचित करती है। उदहारण के लिए अब संस्कृत में रचना नहीं होती । संस्कृत देव भाषा होकर जन जीवन से अलग हो गई। जनजीवन के सामान्य सोचों और अनुभवों से अलग होकर हमारे संस्कृति से भी अलग हो गई। संस्कृत भाषा में हमारी संस्कृति के जो संस्कार थे हम उससे अलग हो गए। भाषा का विकास व्याकरण रचना में उतना नहीं देखा जाता है, जितना कि लोक से जुड़ी हुई भाषा में देखा जाता है।

सर्जनात्मक लेखन में भाषा का नवीकरण होता है। नई शब्द संपदा से भाषा को विभूषित करते हैं। हिंदी साहित्य में रीतिकाव्य की भाषा जड़ हो चुकी थी। शब्द इतने घिस गए थे कि उनसे नये अर्थ की संभावना समाप्त हो चुकी थी। इस भाषा में नई अनुभूति की अभिव्यंजना संभव नहीं थी। जड़ भाषा में रचनात्मक संवेदना भी एक तरह से कला की कसरत ही माना जाता है। ऐसी स्थिति में भारतेंदु और उनके सहयोगियों द्वारा अर्जित भाषा ने ही रचनात्मकता का द्वार खोला। भाषा जो जन सामान्य से दूर हो गई थी। वह वापस जन सामान्य से जुड़ी। भाषा कहाँ जड़ हो रही है, इसकी पहचान सबसे पहले रचनात्मक लेखकों को होती है।

आधुनिक युग में जब भाषा के विविध प्रयोग से भाषा के अर्थ घिस रहे हैं, ऐसे संकट के क्षणों में सर्जनात्मक लेखन की भाषा का महत्व और बढ़ जाता है। राजनीति, व्यावसायिकता और विज्ञापन भाषा को लगातर भ्रष्ट कर रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में भाषा के प्रति सर्जक का दायित्व बढ़ जाता है। जब अपनी भाषा के प्रति ममत्व जागेगा सृजनात्मक अनुभव भाषा में अपना रास्ता टटोल लेंगे।

22.6 भाषा का शिल्प से संबंध

भाषा नदी के समान प्रवाहशील है। उसे रूप देने के लिए किसी न किसी शिल्प में ढ़ालना होता है। कहानी उपन्यास नाटक आदि विधाओं का अपना अलग-अलग शिल्प है। लेकिन प्रत्येक रचना का भी अलग शिल्प होता है। मान लीजिए मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' को लें। इसमें मुक्तिबोध ने कविता में कई शिल्पों का बेहतरीन प्रयोग किया है। जैसे फिल्म, नाटक और फंतासी के शिल्प का। कविता में नाटकीयता बहुत अधिक है। भाव तेजी से परिवर्तित होते हैं। इसी तरह दृश्य बिंबों का इस्तेमाल भी किया गया है। मानवीय अनुभूति की जटिलता को सीधे-सीधे दिखाना संभव नहीं रहा। जटिलता को दिखाने के लिए नये-नये शिल्पगत प्रयोग किये गये हैं। उपन्यास को जीवनी के ढ़ंग से लिखने पर 'शेखर : एक जीवनी' की भाषा में आत्मीयता का स्पर्श आ गया है। भाषा वर्णन से आगे बढ़कर संवेदना की भाषा हो गई है। इसी तरह कविता में नाटक और काव्य को मिलाकर 'अंधायुग' की रचना हुई। इससे नाटक का प्रभाव कई गुना बढ़ गया। नाटक की अभिनय प्रधान भाषा के साथ कविता की अर्थगर्भित भाषा के प्रयोग से इसमें अक्षय मानवीय संवेदना का स्पर्श मिल गया है। इसमें न खत्म होने वाली ऊर्जा है। कितनी ही बार इस नाटक को खेला गया, फिर भी इस नाटक में अर्थ की ऊर्जा शेष है। यह भाषा की ही शक्ति है।

भाषा के साथ-साथ शिल्प की तकनीक को भी विकसित करने की आवश्यकता है। अनुभव की जटिलता शिल्प में बँध, उस सच को समर्थ ढ़ंग से अभिव्यक्त कर पाती है। शिल्प के बदलने से भाषा का अर्थ बदल जाता है। नये शिल्प में रचने के लिए नई भाषा की खोज आवश्यक हो जाती है।

बोध प्रश्न-3

1) निम्नलिखित में से जो सही वाक्य हों उनके आगे सही का निशान (√) और जो गलत हो उनके आगे गलत का निशान (×) लगाइए।

   क) फीचर काल्पनिक विधा है। ( )

   ख) निबंध रचनात्मक और आलोचनात्मक दोनों तरह के हो सकते हैं। ( )

   ग) कहानियों की वाचिक परंपरा अब लुप्त सी हो गई है। ( )

   घ) रीति कालीन भाषा लोक भाषा के नजदीक थी। ( )

2) कहानी और उपन्यास में कोई एक अंतर बताइए।

   .....

   .....

3) फीचर विधा का संबंध किससे है?

   .....

   .....

अभ्यास

1) सर्जनात्मक भाषा की प्रमुख विशेषताएँ बताइए?

2) कहानी की भाषागत विशेषताओं का उल्लेख कीजिए?

3) भाषा और शिल्प के अंतःसंबंधों पर प्रकाश डालिए।

4) अपने द्वारा पठित किसी कहानी की भाषा की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

5) कोई दो फीचर पढ़कर उनकी भाषा की तुलना कीजिए।

22.7 सारांश

सर्जनात्मक लेखन की भाषा के इस अध्ययन के माध्यम से आप रचनात्मक साहित्य और शास्त्रीय अध्ययन की भाषा के अंतर को समझ गए होंगे। रचनात्मक भाषा और साधारण भाषा के फर्क को समझने में भी आपको कठिनाई नहीं हुई होगी। भाषा द्वारा किस प्रकार से गद्य-पद्य की रचना संभव होती है। सर्जनात्मक लेखन की भाषा जड़ होने पर किस प्रकार लौक और बोलचाल की भाषा का प्रयोग करती है। रचनात्मक लेखन और संस्कृति के संबंध के बीच के रिश्ते की पहचान भी आपको हुई होगी। वाचिक पंरपरा से लिखित परंपरा में भाषा का रूप परिवर्तित होने लगा। सर्जनात्मक लेखन की भाषा में विधाओं के अंतर से भाषा का रूप बदलता है। सर्जनात्मक भाषा का महत्व किस प्रकार से हमारे समकालीन जीवन में बढ़ गया है। अनुभूति से शून्य होती भाषा में संस्कृति कितनी असमर्थ होती है। भाषा में शिल्प के परिवर्तन से भाषा का रंग बदल जाता है। जिंदगी और भाषा के बीच फासला बहुत कम है। जीवन से

भिन्न भाषा का कोई महत्व नहीं है। सर्जनात्मक भाषा भी अपनी शक्ति मानव जीवन से ही प्राप्त करती है। इन सभी पक्षों का आपने इकाई में अध्ययन किया है।

बोध प्रश्नों और अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) i) नवीनता और अर्थवान

ii) आगामी युगों में भी प्रासंगिक

iii) मानवीय संवेदनाओं की अभियक्ति

2) i) साहित्य

ii) अभिनय

iii) बढ़

3) यदि उसमें नवीनता, मौलिकता और रचनात्मक अर्थवत्ता हो।

बोध प्रश्न-2

1) लोक व्यवहार में पारस्परिक बातचीत की भाषा बोलचाल की भाषा कहलाती है जिसमें भाषा के व्याकरण के प्रयोग में शिथिलता रहती है।

2) नहीं, क्योंकि उसमें नये अनुभव और बोध को व्यक्त करने की सामर्थ्य नहीं होती।

3) कविता की वाचिक परंपरा मुद्रण प्रणाली के आगमन के कारण समाप्त हुई है।

बोध प्रश्न-3

1) क) x ख) √ ग) √ घ) x

2) कहानी में जीवन के एक खंड का वर्णन होता है, उपन्यास में जीवन का व्यापक चित्रण होता है।

3) समाचार पत्रों से

अभ्यासों के उत्तर इकाई को पढ़कर स्वयं लिखिए।